International Journal of Applied Research 2017; 3(8): 770-772

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2017; 3(8): 770-772
www.allresearchjournal.com
Received: 28-06-2017
Accepted: 30-07-2017

डॉ0 अनुज कुमार तरुण
असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग
श्री अरविंद कॉलेज (सांध्य)
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली,
भारत

Correspondence Author:
डॉ0 अनुज कुमार तरुण
असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग
श्री अरविंद कॉलेज (सांध्य)
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली,
भारत

मंडल और कमंडल युग में कबीर

डॉ0 अनुज कुमार तरुण

सारांश
बीसवीं सदी का अंतिम दशक विश्वव्यापी परिवर्तनों का काल है। इन विश्वव्यापी घटनाओं का भारतीय समाज पर प्रभाव पड़ा। इस काल में भारत के अन्दर भी ऐसी ऐतिहासिक घटनाएँ घटती हैं, जिनका प्रभाव भारतीय समाज पर काफी गहरा पड़ता है। इस समय में एक के बाद एक कई ऐसी महत्वपूर्ण घटनाएँ घटित होती हैं जो हमारी सोच के पारंपरिक ढांचे को तोड़कर हमें एक नयी दुनिया के सामने ला खड़ा कर देती है। इन घटनाओं में सबसे महत्वपूर्ण घटनाएँ थीं – 1990 में वी.पी. सिंह सरकार द्वारा मंडल कमीशन की सिफारिशों को लागू किये जाने की घोषणा, 1991–92 में आर्थिक उदारीकरण की शुरूआत और 1992 में अयोध्या में बाबरी मस्जिद का विध्वंस। मंडल कमीशन की सिफारिशों का लागू किया जाना समाज में मंडलीकरण यानी जाति के आधार पर समाज के राजनीतिकरण का मार्ग प्रशस्त करता है। बाबरी मस्जिद के विध्वंस ने देश में साम्प्रदायिकता को विकराल रूप में खड़ा कर दिया। इन घटनाओं पर गहन संवाद करते हुए जब कारण और निदान के लिए अपनी दृष्टि दौड़ते हैं तो कबीर दिखाई देते हैं। अर्थात मंडल और कमंडल जैसे राजनीतिक एवं सामाजिक संवेदनशील समस्याओं के समय में कबीर को नई पीढ़ी के सामने समझने और समझाने की जरूरत है ,क्योंकि वर्तमान परिवेश में कबीर उतने ही महत्वपूर्ण हैं जितना मध्यकालीन समाज के लिए थे।

मूल शब्द: मंडल, कमंडल

परिचय
कबीर उस समय अवतरित हुए जब मध्यकाल अंधकार से घिरा था। सामाजिक कुरीतियां व आडंबर के अंधेरे को कबीर ने अपनी आधुनिक दृष्टि, और तर्कसंगत वाणी से दूर करने का ईमानदार प्रयास किया। जिसमें उन्हे सफलता प्राप्त हुई। "उस समय की भूली भटकी जनता के लिए वे एक सशक्त अवलम्ब बनकर सामने आए। उन्होंने समाज में व्याप्त कुरीतियों का डटकर विरोध किया। अंधविश्वासों, दकियानूसी अमानवीय मान्यताओं तथा गली–सड़ी रूढ़ियों की कटु आलोचना की। उन्होंने समाज, धर्म तथा दर्शन के क्षेत्र में महत्वपूर्ण विचारधारा को प्रोत्साहित भी किया। कबीर जहां एक ओर बौद्धों, सिद्धों और नाथ की साधना पद्धति तथा सुधार दृपरंपरा के साथ वैष्णव संप्रदायों की भक्ति दृभावना को ग्रहण किया वहाँ दूसरी ओर राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक एवं आर्थिक असमानता के विरुद्ध प्रतिक्रिया भी व्यक्त की। इस प्रकार मध्यकाल मे कबीर ने प्रगतिशील तथा क्रांतिकारी विचारधारा को स्थापित किया।"[1]

बीसवीं सदी के अंतिम दशक मे कबीर के महत्व पर बात करने से पहले इस दशक के घटनाक्रम समझना जरूरी हो जाता है। बीसवीं सदी का अंतिम दशक विश्वव्यापी परिवर्तनों का काल है। परिवर्तनों का यह दौर सोवियत संघ के विघटन से शुरू हुआ माना जा सकता है। इस घटना ने पूंजीवाद को शक्ति प्रदान की। दो ध्रुवीय विश्व के अंत विश्व के शक्ति संतुलन को अमेरिका की ओर झुका दिया। गैट, डब्ल्यू.टी.ओ, ईराक युद्ध–1, अफगानिस्तान युद्ध, ईराक युद्ध–2, इस्लामी जिहादियों का उदय और विश्व आतंकवाद आदि इस दौर की प्रमुख घटना थी। इन विश्वव्यापी घटनाओं का भारतीय समाज पर प्रभाव पड़ा। इस काल में भारत के अन्दर भी ऐसी ऐतिहासिक घटनाएँ घटती हैं, जिनका प्रभाव भारतीय समाज पर काफी गहरा पड़ता है।

नब्बे के दशक की शुरूआत में भारतीय इतिहास में एक नया मोड़ आता है। इस समय में एक के बाद एक कई ऐसी महत्वपूर्ण घटनाएँ घटित होती हैं जो हमारी सोच के पारंपरिक ढांचे को तोड़कर हमें एक नयी दुनिया के सामने ला खड़ा कर देती है।

इन घटनाओं में सबसे महत्वपूर्ण घटनाएँ थीं – 1990 में वी.पी. सिंह सरकार द्वारा मंडल कमीशन की सिफारिशों को लागू किये जाने की घोषणा, 1991–92 में आर्थिक उदारीकरण की शुरूआत और 1992

में अयोध्या में बाबरी मस्जिद का विध्वंस। पिछले डेढ़ दशक में भारतीय समाज में परिवर्तनों की जो बयार बहती है, उसका संदर्भ इन्हीं तीन घटनाओं से जुड़ता है। योगेन्द्र यादव लिखते हैं – ''उस समय राष्ट्रीय क्षितिज पर एक साथ तीन मकान उभरे। यह सोवियत संघ के विघटन का भी समय था जिसे भारतीय राजनीति में समाजवादी मुहावरे का बोलबाला खत्म कर दिया था। ये तीन मकान हैं – मंडल, मंदिर और मार्केट।''(2)

पिछले डेढ़ दशक में भारतीय समाज में परिवर्तन की जो बयान बहती है उनका संदर्भ इन तीन घटनाओं से जुड़ता है। 'आर्थिक उदारीकरण' ने देश में भूमंडलीकरण की स्थिति तैयार की और बाजारवाद और उपभोक्ता संस्कृति को प्रोत्साहित किया। मीडिया और संचार–क्रांति के औजारों से युक्त होकर बाजार ने हमारे यहाँ (विशेषतः शहरों में लेकिन गाँवों में भी इसके प्रभाव को कम कर के नहीं आंका जाना चाहिए। एक नयी मूल्य व्यवस्था पैदा की है। उत्पादन–प्रणाली में परिवर्तन और सेवा क्षेत्र के विकास ने एक नयी समाज व्यवस्था पैदा की है।

मंडल कमीशन की सिफारिशों का लागू किया जाना समाज में मंडलीकरण यानी जाति के आधार पर समाज के राजनीतिकरण का मार्ग प्रशस्त करता है। विभिन्न जातिगत अस्मिता समूहों का उदय तथा जाति आधारित राजनैतिक पार्टियों का देश की गोबर पट्टी पर शासन इसी निर्णय का परिणाम है।

बाबरी मस्जिद के विध्वंस ने देश में साम्प्रदायिकता को विकराल रूप में खड़ा कर दिया। इसने हमारे राजनैतिक–सामाजिक सोच तथा सहनशीलता की दिशा तय करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। कुल मिलाकर इन घटनाओं ने एक ऐसी मानसिक वृत का निर्माण किया जिसने सामाजिक सोच की हदें खींचने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। यह घटना शायद असंगत नहीं होगा कि इन मानसिक वृत से बाहर देख पाना समाज के लिए संभव नहीं हो पाया है। आज की सभी घटनाओं, सभी महत्वपूर्ण एवं गैर–महत्वर्पूण संवाद की जड़ को इन घटनाओं में ढूँढ़ा जा सकता है। इन घटनाओं पर गहन संवाद करते हुए जब कारण और निदान के लिए अपनी दृष्टि दौड़ते हैं तो कबीर दिखाई देते हैं।

मंडल आयोग की संस्तुतियां सार्वजनिक हुई तो उस पर जबर्दस्त प्रतिक्रियाएं हुई। खासकर उत्तर भारत के अधिकांश प्रदेशों में आंदोलनों का सिलसिला कई महीनों तक चला। धरना प्रदर्शन व रास्ता जाम आदि से जनजीवन अस्त–व्यस्त रहा। जागतिगत भेदभाव भारतीय समाज के लिए नई बात नहीं थी, परन्तु मंडल के बाद जिस तरह समाज दो हिस्सों में बंटा वह आजाद भारत के लिए शुभ संकेत नहीं था। ''मंडल निर्णय का सबसे घातक पहलू इसका सामाजिक रूप विभाजनकारी होना था। सामाजिक न्याय के नाम पर इसने जाति को जाति के विरुद्ध खड़ा कर दिया।''(3) आरक्षण के इस लड़ाई में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लोगों ने भी मंडल समर्थकों का पूरा साथ दिया। दलित वर्ग मंडल के समर्थन में पिछड़े वर्ग के साथ सड़क पर उतर आए। इस तरह दो गुट बन गए। एक आरक्षण समर्थन के लिए दूसरा आरक्षण विरोधी के रूप में। आरक्षण विरोधियों में युवाओं के अलावा एक ऐसा वर्ग भी शामिल था जो पहले से मिल रहे एससीध्एसटी को आरक्षण से दुखी थे, उनके लिए यह एक मौका था, अपने विरोध प्रकट करने का। यह वर्ग युवाओं में सामाजिक नयाय की बात समझाने के बजाय विरोध करने की रणनीति बनाने में सहयोगी थे। इस वर्ग के अधिकांश लोगों ने आरक्षण व्यवस्था को नौकरी के अवसर से जोड़कर देखा, जबकि आरक्षण सामाजिक हिस्सेदारी के लिए अपनाया गया था। ''इस कदम से जिन्हें हानि पहुंचती थी, उन्हें यह समझाने का कोई प्रयास नहीं किया गया कि उन्हें व्यापक हित में इसे क्यों स्वीकार करना चाहिए।''(4) सामाजिक भागीदारी की इस लड़ाई पर बात करते हुए बहुत सारे बुद्धिजीवियों ने अपने अनुसार पक्ष और विपक्ष में अपने–अपने तर्क दिए हैं। नामवर सिंह लिखते हैं ''पिछड़े हुए लोगों को यदि आप आर्थिक दृष्टि से मुक्त नहीं करते हैं, तो उनकी सामाजिक मुक्ति कोई मुक्ति नहीं होगी।''(5)

मुक्ति के इस प्रश्न पर हमारी सोच नामवर जी से भिन्न है। जहां तक मेरी समझ है, उसके अनुसार जाति प्रधान भारतीय समाज में दलितों व पिछड़ों के लिए आर्थिक मुक्ति से कहीं ज्यादा जरूतर सामाजिक मुक्ति की है। क्योंकि आर्थिक मुक्ति का प्रश्न वर्ग मूलक समाज के लिए तो कारगर हो सकता है वर्ण व्यवस्था में नहीं। जिस समाज में व्यक्ति की पहचान ही जाति है, उसे आर्थिक मजबूती दलित से ब्राह्मण नहीं बना सकती। राजेन्द्र यादव लिखते हैं ''निचले वर्ण का आदमी अवसर मिलने पर या आरक्षण के माध्यम से ऊपर तो आ सकता ह लेकिन वर्ण–व्यवस्था के चलते उसे सामाजिक सम्मान और स्वीकृति नहीं मिलती। यह बहुत बड़ा दंश है दलितों के मन में। सम्मान की चाह इस समय उनमें सबसे ज्यादा है और वही उनको नहीं दिया जा रहा है।''(6) विमर्श के इस बिन्दु पर महात्मा कबीर सामाजिक न्याय के लिए सामाजिक मुक्ति के पक्ष में दिखते हैं। कबीर ने जिस समतामूलक समाज की परिकल्पना के लिए वर्ण– व्यवस्था का विरोध किया उसके मूल में सामाजिक मुक्ति और सामाजिक हिस्सेदारी का स्वर ही प्रमुख रहा है।

'डॉ. अम्बेडकर के अनुसार जातिवाद भारतीय समाज का सबसे बडा कोढ है। यहाँ समय के साथ सब चीजें नष्ट हो जाती हैं, लेकिन 'जाति' एक ऐसी चीज शब्द है जो कभी नहीं जाती। सोपानीकृत अवस्था में स्वर्ण, अवर्ण, अस्पृश्यता, ऊँच– नीच आदि से जर्जर भारतीय समाज के विरुद्ध कबीर ने मुखर आवाज उठाई तथा मानव मुक्ति की बात की। जन्म के आधार पर भेदभाव को वे अमान्य ठहराते हैं –

जो तू बामन बामनि जाया, आन बाट तैं काहे न आया।(7)

'कबीर ने पुराण–प्रतिपादित ब्रह्मणवादी वर्ण–व्यवस्था, जो कि सम्भव है अपने उत्सकाल में योग्यता और कर्म पर आधारित वर्ग–विभाजन रहा हो, परवर्ती कालों में घोर आडम्बर युक्त, वंश–परम्परा पर आधारित विकृत जाति–प्रथा का रूप धारण कर चुकी थी, का डटकर विरोध किया और एक ऐसे पाखण्ड तथा आडम्बर हीन समाज की स्थापना पर जोर दिया जिसमें सर्वजन बिना आत्महीनता का शिकार हुए अपनी और सामाजिक उन्नति कर सकें। वे एक समरस समाज की स्थापना के पक्षधर थे जिसमें बिना किसी ऊँच–नीच के, बिना जातिगत भेद–भाव के वे सारी वरीयताएं सर्वजन हेतु सुलभ हों जिसके लिए वे योग्य और अधिकारी हों। इस रूप में कबीर ने जाति या वर्ण–व्यवस्था की वंशानुगत अवधारणा का विरोध करके कर्माधारित आडम्बरहीन समाज–दर्शन का पुरजोर समर्थन किया जिसकी आज भी महती आवश्यकता है।(8)

कबीर वर्ण–व्यवस्था में श्रम का नहीं अपितु श्रमिक जातियों के साथ हो रहे भेद भाव एवं कर्म के आधार पर उनके सामाजिक अधिकारों से वंचित रखने के विरोध में थे। उपरोक्त के समर्थन में कबीरदास जी की निम्न रचनाएं द्रष्टव्य हैं

- ऊँचे कुल का जनमिया जे करनी ऊँच न होय। सुबरन कलस सुरा भरा साधू निन्दत सोय।।
- हमारे कैसे लोहू तुम्हारे कैसे दूद। तुम कैसे बांभन पाण्डे हम कैसे सूद।।

कबीर ने लोगों को कर्मकांड, आडम्बरों और कुरीतियों के खिलाफ लड़ने की शिक्षा दी। वास्तव में, पथभ्रष्ट समाज को उचित मार्ग पर लाना ही कबीर का मुख्य उद्देश्य था । " वे आम आदमी की आवाज थे। उन्होंने निम्नवर्गीय चेतना को शब्द दिये। कबीर ने जन्मध्जाति या कुलगत उच्चता के बजाय कर्म तथा विचारों की उच्चता को प्रतिष्ठा दी। उन्होंने एक आदर्श समाज का सपना देखा एवं जो वर्णभेद जैसी मानव–मानव को अलग करने वाली परम्पराओं का खण्डन किया। आज जब जाति का बोलबाला है, तब कबीर द्वारा जातिवाद के विरुद्ध की गयी इस एकतरफा लडाई की याद आती है। वे आमजन की आवाज थे तथा अंधकारयुग के जन नेता थे।(9) वे अपने समय के समाज के सच्चे प्रहरी बनकर समाज को जगाने का आजीवन प्रयास करते रहे। "कबीर पहले संत थे जो संत होकर भी अंत तक गृहस्थ बने रहे एवं शारीरिक श्रम की

प्रतिष्ठा (कपहदपजल वि संइवनत) को मानव की सफलताओं का आधार बताया।[10]

"संतों की ओर से जाति–प्रथा को चुनौती बहुत पुराने जमाने से मिलनी चली आ रही है। ऐसे संतों में सर्वप्रथम नाम महात्मा बुद्ध का है। असल में, कबीर, नानक आदि उसी धारा के संत हैं जो बुद्ध के कमंडल से बही थी। [11] भारतीय समाज इन संतो के विचारों को गभीरता से समझने समझाने के बजाय जाति व्यवस्था को मजबूत करने और इन संतो का उपहास करने का षड़यंत्र करता रहा ।

परिणामतरू आजाद भारत में बुद्ध के कमंडल से बही हुई विकृत जाति–प्रथा का विरोधी स्वर बीसवीं सदी के अंतिम दौर में मंडल का रूप ले लिया।

इस दौर की दूसरी महत्वपूर्ण घटना थी– 6 दिसम्बर 1992 को बाबरी मस्जिद विध्वंस। बाबरी मस्जिद–रामजन्म भूमि मुद्दा देश के लिए घाव की तरह रिस रहा है और देश के अंदर सांप्रदायिक ताकतों की राजनीतिक रूप से वृद्धि जारी है। सांप्रदायिक ताकतों ने भारत के सामाजिक और राजनीतिक ढांचे को हिला दिया, मानवीय संबंधों पर भी इसका व्यापक प्रभाव पड़ा। यह धार्मिक सद्भावना को झकझोर दिया। हालांकि भारत वर्ष के लिए सांप्रदायिक समस्या कोई नई चीज नहीं है। भारतीय समाज में यह समस्या लंबे समय से मौजूद है। यह अवश्य है कि समय–समय पर इसका स्वरूप बदलता रहा है और नए–नए रूपों में प्रकट होती रही है। पहले यह समस्या अज्ञानता के कारण थी जबकि वर्तमान दौर में अज्ञानता और गलत इतिहास दृष्टि का थोपा जाना। इतिहास की सही समझ विकसित न होने के पीछे हिंदू एवं मुस्लिम संप्रदायवादी दोनों का हाथ रहा है। हिन्दू साम्प्रदायियों ने अपने धर्म व संस्कृति को श्रेष्ठ बताते हुए सारी बुराईयों की जड़ मुसलमानों को माना। ठीक उसी तरह से मुस्लिम संप्रदायवादी शुरू से अब तक अपने को अलग साबित करते रहे। रोमिला थापर ने लिखा है

"Hindu communalists try and project an ideal Hindu society in the ancient period and attribute the ills of India to the coming of the 'Muslims'. Equally 'Muslim communalist try and prove the roots of separatism from the beginning of the medieval period onwards." [12]

इस संदर्भ में कबीर कहते है–

कहै हिन्दु मोहि राम पिआरा, तुरक कहे रहिमाना।
आपस में दोऊ लरि–लरि मुए, मरम न कोऊ जाना।।

'धर्मनिरपेक्ष लोकतांत्रिक भारत के लिए हमें आदर्श समाज की रूपरेखा कबीर के संदशों में मिलती है। हिन्दू समाज द्वारा बहिष्कृत तथा मुस्लिम समाज द्वारा तिरस्कृत कबीर ने ईश्वरीय एकता की बात कही। उन्होंने धर्म के नाम पर भेदभाव तथा ईश्वर के नाम पर लडाई का ताकिर्क खण्डन किया।

कांकर पत्थर जोरि के मस्जिद लई बनाय।
ता ऊपर मुल्ला बांग दे क्या बहरा हुआ खुदाय।।

दुनिया कितनी बाबरी जो पत्थर पूजन जाए।
घर की जाकी कोई न पूजे कबीरा जका पीसा खाए।।

कबीर के राम निर्गुण एवं निराकार ईश्वर थे। उन्होंने उसे सबका प्रभु बनाया तथा मानव धर्म की प्रतिष्ठा की। उन्होंने आस्तिकों के ईश्वरीय ग्रंथ की उपासना स्थल तथा अनुयायियों के नाम पर विभेद को नकारा तथा धार्मिक समन्वय की अवधारणा प्रतिपादित की। आज के धार्मिक वैमनस्य के वातावरण में कबीर के विचार प्रासंगिक हैं कि हिन्दू उसे राम कहता है। मुसलमान खुदा कहता है। तू उसकी परवाह न कर तब काबा काशी हो जाएगा और राम रहीम हो जाएगा।[13] कबीर धार्मिक क्षेत्र मे सच्ची भक्ति का संदेश लेकर प्रकट हुए थे। उन्होने निर्गुण दृ निराकार भक्ति का मार्ग अपनाकर मानव धर्म के सम्मुख भक्ति का मौलिक रूप रखा यह सदैव स्मरण रखना चाहिए कि कबीर के राम दशरथ पुत्र राजा राम नहीं हैं अपितु घट दृघट में निवास करने वाली अलौकिक शक्ति है जिसे राम–रहीम, कृष्ण, खुदा कोई भी नाम दिया जाए। उसका एक रूप है। उसकी प्राप्ति के लिए न मंदिर कि आवश्यकता है न मस्जिद की। वह सबमें विद्यमान है और सभी उसे भक्ति तथा गुरु की कृपा से प्राप्त कर सकते हैं।[14] अतः निसंदेह होकर कहा जा सकता है राम मंदिर और बाबरी मस्जिद विवाद का अंत कबीर के भक्ति मार्ग से ही संभव हैं। आज जब कबीर की 500वीं पूर्णतिथि का उत्सव माना रहे है तो ऐसे समय में कबीर को नई पीढ़ी के सामने समझने और समझाने की जरूरत है, क्योंकि वर्तमान परिवेश में कबीर उतने ही महत्वपूर्ण हैं जितना मध्यकालीन समाज के लिए थे।

संदर्भ सूची

1. मध्यकालीन भारत भाग –1 सं दृ हरिशचन्द्र वर्मा ,लेख –मध्यकालीन भारत के सामाजिक दृधार्मिक जीवन पर भक्ति और सूफी दृआंदोलन का प्रभाव, सुनीता पुरी,पृ०–438
2. लोकतंत्र के सात अध्याय, सं. अभय कुमार दुबे, लेख कायापलट की कहानी, योगेंद्र यादव, पृ.52
3. आजादी के बाद का भारत, बिपिन चन्द्र, पृ. 383
4. आजादी के बाद का भारत, बिपिन चन्द्र, पृ. 383
5. कथन सं. रमेश उपध्याय, अक्टूबर–दिसम्बर अंक 1999, नामवर सिंह मर्ज बढ़ता ही गया, ज्यों ज्यों दवा की, पृ. 62
6. कथन, सं. रमेश उपाध्याय (अंक, अक्टूबर–दिसम्बर 1999), राजेन्द्र यादव, आरक्षण जरूरी है, पृ. 65
7. http://hindisahityaias.blogspot.in/2012/11/blog-post_5.html
8. http://shalinikikalamse.blogspot.in/2011/01/blog-post.html
9. http://hindisahityaias.blogspot.in/2012/11/blog-post_5.html
10. मध्यकालीन भारत भाग –1 सं दृ हरिशचन्द्र वर्मा ,लेख –मध्यकालीन भारत के सामाजिक दृधार्मिक जीवन पर भक्ति और सूफी दृआंदोलन का प्रभाव, सुनीता पुरी,पृ०–439
11. मध्यकालीन भारत भाग –1 सं दृ हरिशचन्द्र वर्मा ,लेख –मध्यकालीन भारत के सामाजिक दृधार्मिक जीवन पर भक्ति और सूफी दृआंदोलन का प्रभाव, सुनीता पुरी,पृ०–439
12. Rhomila Thaper, Communalism and Writing of Indian History
13. http://hindisahityaias.blogspot.in/2012/11/blog-post_5.html
14. मध्यकालीन भारत भाग –1 सं दृ हरिशचन्द्र वर्मा ,लेख –मध्यकालीन भारत के सामाजिक दृधार्मिक जीवन पर भक्ति और सूफी दृआंदोलन का प्रभाव, सुनीता पुरी,पृ०–439